माँ

पलाश को कोई फ़र्क नहीं पड़ेगा इस बरस,
वह फिर फूल जाएगा बस सुर्ख नारंगी।
रक्ताभ खिले गुलमोहर को भी कौन रोक पाएगा
मलयज झकोरों में झूमने से।

उसे क्या पता कि इस बसंत में,
दूर तक कहीं भी मेरी माँ नहीं दिखेंगी।
किसी रेतीले रास्ते पर अब नहीं बनेंगे माँ के पदचिह्न,
उनकी टूटती साँसों की आहट, अब नहीं सुनाई देगी कानों को।

मेरे मन की शाख से किसी पीत-विवर्ण पत्ते-सी झर गई माँ,
मृत्यु-गान की लहरियों से अनुशंसित उनकी चेतना ने सुना ही नहीं
मेरे आमंत्रित करते हहराते जीवन-स्वरों को।

जाने के बाद भी उनके स्पर्श को महसूस किया है मैंने अपने काँधे पर।
क्या गौरैया चिड़िया का रूप धर आती है माँ?
तभी तो आँगन की चटकीली धूप,
और अधिक सुनहरी, रुपहली हो उठती है।

कहीं मंथर गति से मंदिर से आते अस्पष्ट चौपाइयों और छंदों के स्वर,
पास ही माँ के रक्षा-स्तोत्र के जापों-से सुनाई देते हैं।

कैसे विस्मृत करेंगी माँ उस निरंजना शरद-पूर्णिमा के शशि को,
जिसकी ज्योत्स्ना से आप्लावित थे हम,
उस खुरदुरी छत पर, भीतर से बाहर तक।

अब जबकि उनमें और मुझमें सात आसमानों की दूरी है,
हज़ारों नक्षत्र हैं उनके और मेरे अंतराल में।

फिर भी एक प्रत्याशा है मन में —
माँ सहेजे हों अपने होठों पर एक अपरिमित मुस्कान।

कि कहीं कोसों दूर मेरे रूप में उनका एक छोटा-सा अंश
सदैव मनन करेगा उनका, और सजल नेत्रों में निरंतर वास होगा माँ का।

अर्चना नेमा
प्रशिक्षित स्नातक शिक्षिका (कला)
पीएम श्री के.वि. सीएमएम, जबलपुर